आर्थिक सुधारों के तीन दशक: एक अवलोकन

sanskritiias.com/hindi/news-articles/three-decades-of-economic-reforms-an-overview

(प्रारंभिक परीक्षा : आर्थिक और सामाजिक विकास)
(मुख्य परीक्षा, प्रश्नपत्र 3 : उदारीकरण का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव)

संदर्भ

जुलाई 2021 में आर्थिक सुधारों की 30वीं वर्षगाँठ पूरी होगी। तीन दशक का समय इस बात का जायज़ा लेने के लिये पर्याप्त समय है कि वे समग्र रूप से अर्थव्यवस्था और समाज के विभिन्न वर्गों के लिये क्या मायने रखते हैं।

तुलनात्मक अध्ययन

- आर्थिक सुधारों ने निश्चित रूप से सकल घरेलू उत्पाद (GDP) के रूप में अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।
- पिछले तीन दशकों में औसत वार्षिक वृद्धि 5.8% प्रति वर्ष रही है, जो वर्ष 1991 से पहले के दशक में 5.6% से थोड़ी अधिक है।
- किंतु, यह वृद्धि भी असमान रही है, विगत दशक में यह दर फिसलकर केवल 5% ही रह गई है।
- स्पष्टतः सुधारों की गति में तेज़ी के बावजूद संवृद्धि की गति बरकरार नहीं रही है।
- हालाँकि, दीर्घावधि की तुलना में अर्थव्यवस्था ने स्वतंत्रता के पहले 40 वर्षों के अपने 4.1% औसत से बेहतर प्रदर्शन किया।
- लेकिन फिर भी संवृद्धि दर भ्रामक है। प्रथम चार दशकों की तुलना वर्ष 1947 से पहले के चरण से की जानी चाहिये।

सुधारों का आकलन

- आर्थिक सुधारों का सबसे बड़ा योगदान भारत के आर्थिक प्रतिमान में बदलाव था, जिसने भारतीय नीति-निर्माण की शब्दावली को फिर से परिभाषित किया है।
- वर्ष 1991 के पश्चात् प्रत्येक सरकार ने 'उदारीकरण और निजीकरण' के उस दर्शन को अपनाया है, जो उन सुधारों ने शुरू किया था। साथ ही, उस पर पिछली सरकारों से आगे निकलने की कोशिश की है।
- सरकार की भूमिका की कीमत पर निजी क्षेत्र की अधिक भागीदारी का वही नीतिगत ढाँचा वर्तमान सरकार की मुख्य नीतियों में शामिल है।
- हालाँकि, 30 वर्षों के उपरांत भी अधिकांश आबादी की स्थिति अपरिवर्तित ही है।

बढ़ती असमानता

- सुधारों ने शहरी क्षेत्रों में अमीर उद्यमियों तथा एक छोटे लेकिन मुखर मध्यम वर्ग का एक वर्ग बनाया।
- लेकिन इसने असमानता को बढ़ाने में भी योगदान दिया, जो वर्ष 1991 के पश्चात् और भी अधिक हो गई।

- असमानताओं का बढ़ना केवल आय या उपभोग में अंतराल तक ही सीमित नहीं है, बल्कि शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों, पिछड़े राज्यों और विकसित राज्यों के मध्य भी है।

मानव संसाधन

- स्वास्थ्य व शिक्षा तथा कई अन्य मानव-विकास संकेतकों तक पहुँच के मामले में असमानताएँ और भी बढ़ गई हैं।
- शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला कार्यबल की भागीदारी या भूख हो, तुलनात्मक रूप से किसी भी वैश्विक चार्ट में सबसे नीचे हैं।
- उक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि मानव विकास तथा कल्याण में निवेश या व्यय भारत की नीतिगत प्राथमिकता नहीं रही है।

रोज़गार

- रोज़गार पर स्थिति अलग नहीं है, नवीनतम आँकड़ों से बेरोज़गारी दर में ऐतिहासिक वृद्धि का संकेत मिलता है।
- एक आधिकारिक उपभोग सर्वेक्षण, जिसे केंद्र सरकार ने लगभग दो वर्ष पूर्व रद्द कर दिया था, ने शायद पहली बार वास्तविक खपत में गिरावट और गरीबी में वृद्धि को दर्शाया था।

आय की स्थिति

- वर्तमान में विनिर्माण क्षेत्र में और समग्र रूप से अर्थव्यवस्था में श्रम के घटते हिस्से का अर्थ है, श्रमिकों की आय में धीमी वृद्धि।
- कार्यबल का बढ़ता 'अनौपचारीकरण और संविदाकरण' अधिकांश श्रमिकों की कामकाजी परिस्थितियों के बिगड़ने का एक कारक रहा है।
- विगत एक दशक में अधिकांश आकस्मिक श्रमिकों के लिये लगभग स्थिर वास्तविक मज़दूरी देखी गई है।

आर्थिक सुधारों की न्यूनतम सफलता के कारक

- वर्ष 1991 के सुधारों की नीतियों को देखते हुए इन संकेतकों पर ऐसे परिणाम आश्चर्यजनक नहीं हैं।
- कई मायनों में, वे सुधार-पूर्व की आर्थिक नीतियों से अलग नहीं हैं, जो सभी आपूर्ति-पक्ष प्रतिक्रियाएँ ही थीं।
- 1991 से पूर्व की योजनाओं ने राज्य के हस्तक्षेप और नियंत्रण के माध्यम से आपूर्ति-पक्ष प्रतिक्रियाओं पर ध्यान केंद्रित किया था।
- आर्थिक सुधारों ने एक उदार नियामक ढाँचे और व्यापार के अनुकूल वित्तीय तथा मौद्रिक नीतियों के माध्यम से निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित करने का प्रयास किया।
- महामारी से पहले भी संकट के लक्षण दिख रहे थे, जो मांग में गिरावट से प्रेरित थे।
- यह मंदी कोई भटकाव नहीं है, बल्कि हमारे आर्थिक सुधारों की प्रकृति का ही अपेक्षित परिणाम है।

भावी राह

- महामारी के कारण हालात बदतर हो गए हैं। लेकिन अधिक सुधारों और आपूर्ति पक्ष के हस्तक्षेप संबंधी मांग से स्थिति में सुधार की कम संभावना है।
- इस बार की समस्या वर्ष 1991 के संकट की तरह नहीं है। इस संबंध में स्थिति की उचित समझ के आधार पर प्रतिक्रिया करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

इस समय श्रमिकों को केंद्र में रखते हुए आर्थिक नीतियों को तैयार करने के तरीके में मौलिक बदलाव की सर्वाधिक आवश्यकता है।